P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* (Part-1) March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

महिला उपन्यासों में पुरूष समानता के लिए नारी संघर्ष एवं स्वतंत्र अस्तित्व की खोज

छवि
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
वी0वी0स्नातकोत्तर
महाविद्यालय
शामली, उ0प्र0

सारांश

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सदी के अन्तिम दशक के साहित्य में स्त्री की अस्मिता का प्रश्न अत्यन्त सशक्त रूप से उभरकर आया है। लेकिन यहाँ भी पुरूष और स्त्री लेखन के अनुसार उनके स्वरों में भिन्नता है। जहाँ पुरूष लेखन में आज भी स्त्री मूलतः देह है और इसीलिए उसका पतन अवश्यंभावी है। वहीं महिला लेखन स्त्री को देह बनाये रखने की साजिश को नकार रहा है। जिस स्त्री को अब तक विषय माना जाता था, जो एक वस्तु मात्र थी, वह अब बराबरी के स्तर की न केवल मांग कर रही है बल्कि बराबरी के स्तर पर बैठने भी लगी है। कुछ समय पूर्व तक अशिक्षा, बेरोजगारी, विवाह–परिवार के बीच पिसती स्त्री, ये सब मुद्दे स्त्री लेखन का वर्ण्य–विषय रहे लेकिन नब्बे के दशक तक आते–आते एक व्यापक बदलाव महिला उपन्यासकारों की दृष्टि में दिखाई दिया। अब यहाँ स्त्रियों की समस्याओं से सम्बन्धित (विवाह आदि) लेखन मूल प्रवृत्ति नहीं रह गई है बल्कि इन समस्याओं की जड़ पर प्रहार कर शाश्वत समाधान खोजना आज के लेखन की मुख्य चिंता है। इसे ही अस्मिता की खोज कह सकते हैं और इसी खोज की प्रकिया का एक भाग है शाश्वत समझी जाने वाली वर्जनाएं, लांछनाएं, निषेध, फिर से बहस का मुद्दा बन रहे हैं। आज का महिला उपन्यास लेखन पितृसत्तात्मक व्यवस्था के शल्य परीक्षण में संलग्न है। बदलते समय में अब स्त्री को समाज नियंता बनने के लिए सामने आना चाहिए जिससे समाज का नक्शा बदला जा सके। वह न केवल अब बराबरी के स्तर की मांग कर रही है वरन् वह बराबरी के स्तर पर बैठने भी लगी है। आज स्त्रियाँ जिस–तिस की पत्नी या बेटी के रूप में सम्बोधित नहीं होना चाहती, उनके लिए अपना अस्तित्व अधिक महत्वपूर्ण है।

मुख्य शब्द : महिला उपन्यासकार, समाजशास्त्री, नारी संघर्ष।

प्रस्तावना

स्त्री और पुरूष के एक दूसरे के पूरक बनने से ही सृष्टि का सफल संचालन संभव हो सकता है। समाज के विकास में पुरूषों से अधिक महिलाओं की भागीदारी रही है। वर्तमान समाजशास्त्री तो क्या, ऋषि–मुनियों तथा साहित्यकारों द्वारा भी उनके सामाजिक, राजनीतिक अधिकारों व उत्थान को महत्व न देने की विडंबना सदियों से चली आ रही है। समाज ने महिलाओं को आर्थिक व्यवस्था से तो नहीं जोड़ा लेकिन आर्थिक उपार्जन में उनके श्रम व ऊर्जा का सदैव दुरूपयोग अवश्य किया गया है। स्त्रियों को सदैव प्रत्येक क्षेत्र में पुरूषों से कम आंका गया तथा वे हमेशा से दोयम दर्जे के नागरिक की भूमिका निभाती रही। उन्हे शारीरिक रूप से कमजोर मानकर पिता, पति, पुत्र के संरक्षण में घर की चारदीवारी में सुरक्षा के नाम पर कैद कर दिया गया। तसलीमा नसरीन लिखती हैं– ''स्त्री को दुर्बल कौन समझते हैं? जो कहते हैं कि स्त्री शारीरिक रूप से दुर्बल है, वे गलत कहते हैं। वे झूठ बोलते हैं। आज भी यदि एक नर और नारी शिशु को भरे तालाब में छोड़ दिया जाए तो पहले जिस शिशु की मौत होगी, वह नर शिशु ही होगा। यदि नारी शिशु का फेफड़ा या हृदय नर शिशु से ज्यादा शक्तिशाली है, यदि प्रतिरक्षा या जिंदा रहने की क्षमता नारी शिशु में अधिक है, तो कैसे एक झटके मे यह राय दे दी जाती है कि स्त्री दुर्बल, कोमल, भीरू और लाजवंती होती है।''

स्त्री को अपने से कमजोर बना पुरूष वर्ग हमेशा उसका शोषण करता है और स्त्री को सामाजिक व्यवहार सिर्फ उतना ही सिखाया जाता है, जितना पुरूष की सेवा के लिए आवश्यक है! स्त्री का कभी अपना कोई स्वतन्त्र व्यक्तित्व हो सकता है, अब तक ऐसी परिकल्पना भी असंभव ही रही है क्योंकि अस्तित्व और संरक्षण के नाम पर बचपन में वह माता –पिता तथा भाई के बंधन में, युवावस्था में, पति के साथ तथा वृद्धावस्था में, सन्तान के आश्रय पर अपना

उपेक्षित जीवन व्यतीत करने से ज्यादा उन्हें कोई अधिकार प्रदान नही किया गया। अधिकारों का उन्हें ज्ञान नहीं कराया गया, सिर्फ कर्तव्य पूर्ण करने की ही शिक्षा दी गयी। इस विषय मे उषा महाजन लिखती है –.....

पुरूष प्रधान समाज ने स्त्री के बेटी पत्नी या विधवा के रूप मे सिर्फ कर्तव्यों की फेहरिस्त गिनाई गई है। स्त्री के क्या अधिकार और हक है इस पर वह सिर्फ खामोशाी अख्तियार कर लेता है। माँ का महिमापूर्ण गौरवशाली पद धारण करने वाली औरत समाज की सर्वाधिक लांछित व्यक्तित्वहीन इकाई है जिसे सदा पुरूष पर आश्रित मान लिया जाता है। आखिरकार क्यों औरत महज एक शरीर भर है या फिर एक इंद्रधनुषी स्वप्न .....? यह सवाल चाहे हमे जितना कुरेदे और कचोटे, हमारे समाज में महिलाओं की स्थिति इतनी अधिक दयनीय है कि शबाना आजमी करोडों अश्वेतो के महान नेता वृद्ध नेल्सन मंडेला को स्नेह और आदर से चूम ले, या एक अरूंधती राय चौधरी अपने मधुर कंठ से पवित्र ऋचाओं के पाठ से वातावरण को पवित्र करे, तो कठमुल्लो और धर्माधिकारियों के पारे चढ़ने लगते हैं। सामाजिक मान–मर्यादा को भंग करने के आरोप मे उन्हे दंडित करने के लिए तरह–तरह के फतवे जारी किए जाते हैं। लेकिन सैंकड़ों कनीजाएँ, अमीनाएँ, बूढ़े शेखों के हाथ भेड़–बकरियों की तरह बिकती रहें या भँवरीबाई जैसी समाजसेवी साथिनों के साथ सामूहिक बलात्कार होते रहे तब वे मुँह में दही जमाए बैठे रहते हैं तब कोई सामाजिक मर्यादा भंग नही होती?

पुरूष वर्चस्वशील समाज और व्यवस्था में स्त्रियों का पुरूषों के समकक्ष खडे होना लोगों को सहज स्वीकार्य नही होता। अपने अधिकारों के लिए सर उठाती महिलाओं को पुरूषवर्चस्वशील सामाजिक व्सवस्था पचा नही पाती क्योंकि आज तक समस्त परम्परा, नैतिकता सब स्त्रियों के दम पर ही चली आ रही है इस विषय मे सत्येन्द्र रंजन लिखते हैं–''परम्परा यह है कि स्त्रियाँ पुरूषों की सेवा करें– घरेलू कामकाज के स्तर पर भी और दाम्पत्य जीवन में, यौन के स्तर पर भी।..... परिवार और समाज का पूरा ढाँचा स्त्रियों के इसी अधिकार त्याग पर आधारित है। इस जबरन कराये गए त्याग का पारम्परिक साहित्य और धर्मग्रन्थों में खूब महिमामंडन हुआ है।

सदियों से निराश स्त्री जाति आज अपने सामाजिक अधिकार एवं स्वयं की पहचान प्राप्त करने के लिए काफी संर्घष के जोश के साथ संघर्ष के मैदान में उतर चुकी है। उसका आत्मबोध जाग उठा है। वह बहन, बेटी, माँ, पत्नी व प्रेमिका की परम्परागत भूमिका से बाहर निकलकर एक व्यक्तित्व के रूप में पहचान पाने के लिए अकुला रही है, वह घर के बाहर भी अपना अस्तित्व दर्शाने मे लगी है। सदियों से पर्दे में रहने वाली स्त्री आज वहां पहुँच रही है, जहाँ अब तक केवल पुरूष ही पहुँचे थे। वह उन विषयों पर विचार करने लगी है जिन पर अब तक पुरूष ही विचार किया करते थे। अधिकांश महिलाएँ अपने आत्मसम्मान और व्यक्तित्व के विकास को अपने जीवन का लक्ष्य मानने लगी हैं।

आज स्त्री प्रत्येक क्षेत्र की चुनौती को स्वीकार कर उसका करारा जवाब देती है और प्रत्येक क्षेत्र में मजबूती के साथ खड़ी रहती है। क्षेत्र चाहे उद्योगों के प्रबन्धन का हो, होटल मैनेजमेंट का, डॉक्टरी, इंजींनियर्स, प्रशासनिक पद, पुलिस वकालत पत्रकारिता, विज्ञापन एंजेसी का, डाक तार, रेलवे का, बसों की कंडक्टरी, बैंको का कम्प्यूटरों का और टैक्नॉलोजी का। स्त्री ने पुरूष को प्रत्येक क्षेत्र मे पीछे छोड़ दिया है। सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और एतिहासिक प्रत्येक मोर्चे पर उसके दखल से वैसी तमाम परम्पराए छीनने लगी हैं जिसमें महिलाओं की दुनिया चूल्हे–चक्की और घर तक ही सीमित समझी जाती थी तथा कला, ज्ञान–विज्ञान, साहित्य, राजनीति आदि के लिए केवल पुरूष ही योग्य समझे जाते थे। समाज में प्राचीन काल से ही अधीनस्थ की भूमिका निभाने वाली स्त्री यदि अपनी प्रतिभा का उपयोग अपने लिए पद–प्रतिष्ठा प्राप्त करने तथा अपनी पहचान बनाने के लिए करती है तो सम्पूर्ण समाज उसे हेय दृष्टि से देखता है। इससे भी भयावह स्थिति उस समय पैदा होती है। जब पुरूषों के समान अधिकारों की मांग कर वह अपना व्यवसाय करना चाहती है, अपना पैसा कमाना चाहती है, व्यवस्था तोड़ती है उस समय उसे अपनी महत्वाकांक्षा की सजा मिलती है। परन्तु फिर भी आधुनिक स्त्री इसके लिए संघर्षरत है। ऐसे ही स्थिति दिखाई पड़ती है 'छिन्नमस्ता' उपन्यास की पात्र प्रिया में जो कि एक उच्च मारवाड़ी परिवार की लड़की है तथा जिसको उसे परिवार ने हमेशा उपेक्षित किया। वह एक ऐसे करोड़पति अग्रवाल घराने की बहू है जहां स्त्री के पास पैसा, जेवर महँगी पार्टियाँ हैं जिसमें पैसा खर्च कर सकते हैं। जेवर पहन सकते हैं परन्तु स्वयं का व्यवसाय चलाने के लिए निजी सम्पत्ति होने के बाद भी जेवर बेच नहीं सकते। वह कपड़ों पर खर्च कर सकती है, किताबों पर नही। अपने सिद्धान्तों के क्रियान्वयन के लिए यदि स्त्री कुछ करना चाहती है तो उसे पुरूष के अधिकार क्षेत्र में घुसकर कमाना होगा अन्यथा पति की दया पर निर्भर रहना पड़ेगा।

प्रिया इस स्थिति को समझकर अपनी मेहनत और प्रतिभा के बल पर अपना व्यवसाय खड़ा करना चाहती है तो उसका पति उसके बच्चे को छीनकर उसे घर से निकाल देता है परन्तु वह फिर भी संघर्ष करती है और स्वयं का व्यवसाय खड़ाकर अपने व्यक्तित्व को अपने पति से अलग एक नया आयाम और पहचान देती है। वह पति नरेन्द्र से कहती है – ''तुम्हारे ये दोहरे मापदण्ड, अपने अहं को आत्मसम्मान की संज्ञा देना और मेरे अहं को अहंकार कहना? तुम कहते हो कि मुझे सब कुछ चाहिए घर, परिवार, पैसा, समाज में स्थान..... क्या तुम नहीं चाहते सब कुछ। मैं यह भी समझती हूं नरेन्द्र कि सब कुछ किसी को भी नहीं मिलता, पर मेरा सब–कुछ चाहना तुम्हे इतना गलत क्यो लगता है?'' वह अपने व्यवसाय से अपनी नयी पहचान बनाती है। उसका व्यवसाय उसे न सिर्फ सम्मान, अस्मिता की पहचान देता है बल्कि उसे हीनभावना से मुक्त कर वाह्य संसार मे प्रभुत्व देता है तो दूसरी ओर उस क्षतिपूर्ति से पति को पटखनी देती है। सास, मां, भाई–बहनों, पुराने क्लॉसफैलो आदि से मानो अपने सारे प्रतिशोध ले लेती है। उसने इस तरह अपनी, पहचान पाई है कि 'इंडिया टुडे' में उसका फोटो छपता है 'ए ग्रेट बिजनेस इंटरप्राइजर मिसेज

प्रिया'। प्रिया न केवल स्वयं को वरन् पूरे नारी समाज को एक पहचान देती है।

चित्रा मुद्गल के प्रसिद्ध उपन्यास एक जमीन अपनी की प्रमुख पात्र अंकिता सुधांशु से प्रेम करती है। अनेक सामाजिक मान्यताओं का उल्लंघन करते हुए उससे विवाह करती है। लेकिन विवाहोपरान्त सुधांशु के दुर्व्यवहार से दुःखी होकर वह महसूस करती है कि जिन विभ्रमों को जिन्दगी के मायने बनाकर बड़प्पन के आड़म्बर में वह घिरी हुई बैठी है– पाखंड है। अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता को प्राप्त करने के लिए अंकिता न केवल सुधांशु के साथ अपने वैवाहिक सम्बन्धों का विच्छेद कर देती है अपितु अपने गर्भ में पलने वाले उसके शिशु से भी स्वयं को मुक्त कर अपने जीवन पर पड़ने वाली सुधांशु की काली छाया से भी मुक्त हो जाती है। सुधांशु ने कहा था – ''अच्छा हुआ जो हमारा बच्चा जीवित नहीं रहा, नही तो ताउम्र वह मुझे तुमसे जोड़े रहता कि तुम मेरे बच्चे की मां हो मेरे पहले बच्चे की।'' क्रोध में आकर उसने संजोकर रखे गए छोटे – छोटे झबलों और लंगोटियों को निर्ममता से स्टोव के सुलगते बर्नर पर रख दिया था, मेरे लिए भी उसका जाना मेरी जिन्दगी से तुम्हारा निष्कासन है..... वरना उसकी शक्ल में मुझे जिन्दगी भर तुमको ढ़ोना पड़ता..... क्योंकि वह हमारा बच्चा नहीं था..... तुम्हारी कामुकता का परिणाम था..... मुझे तुमसे घृणा है, तुम्हारी ऐयाशियों और ज्यादतियों को सती–साध्वी बनी मांग में सजाए इस में मुगालते में रहना कि मैं स्त्रीत्व की पूर्णता का भ्रम जीती रहूंगी, लो इसी वक्त यह रिश्ता खत्म। उसने अपनी कलाइयों की चूड़ियाँ छन्न से फर्श पर उछाल दी थी और पैरो के बिछुए लोढ़े से कुचल दिए थे। वह सुधांशु का घर छोड देती है। अपने संघर्ष और परिश्रम से वह धीरे–धीरे बम्बई जैसे महानगर में फ्लैट, गाड़ी जैसी सुविधाएं तो एकत्र करती ही है वरन् इन सबसे अधिक महत्वपूर्ण वह विज्ञापन जगत में अपनी एक अलग पहचान बनाती है। अपने आचरण के कारण स्त्री की छवि को दूषित करने के लिए दोषी ठहराए जाने पर नीता कहती है ''.....अनपढ़ औरत को छोड़ भी दे तो विश्वविद्यालय से डिग्रियां लेकर निकली ये छोकरियां मांग में पुरूष को सजाकर बैठाए रखने के लिए इतनी आतुर क्यों होती है? पुरूष से स्वतंत्र होना है तो पहले उन्हें सिंदूर पोंछना होगा। बिछुए त्यागने होंगे। दासीत्व के प्रतीक चिन्ह। यह इस्तेमाल अधिक खतरनाक है। उससे तो पहले मुक्त कर लो इन्हें।''

'सीता' उपन्यास की पात्र सीता की बड़ी बेटी का विवाह झारखण्डी नेता सन्त ने अपने सम्पर्क के एक आदिवासी लड़के से करवा दिया। सीता अब अपनी यूनियन छोड़कर उनकी यूनियन में चली गई। सीता को काबू में लाने के लिए सन्त ने बहुत दूर से जाल फेंका था। अब सीता पर तरह–तरह की पाबन्दियाँ लगाई जाने लगी थी परन्तु सीता न तो जल्दी मानने वाली थी और न ही झुकने वाली। उसके मन और मस्तिष्क ने तर्क करना सीख लिया था। वह अपने प्रश्नों का स्वयं उत्तर खोज लेती थी। उसने अपने बल पर जीना सीख लिया था फिर वह क्यों किसी नेता की गुलामी करती। सीता के आने के बाद यूनियन में महिलाओं की सदस्यता बढ़ने लगी। सन्त को यह सब नागवार गुजरता था। रास्ते में यदि सीता मिल जाती तो वह उसे 'रंडी', 'वेश्या' तक कह डालता। सीता पलटकर उसे दस गाली देती परन्तु चुप नहीं रहती। जब कभी सन्त मीटिंग में, रैलियों में सीता को देखता, तभी कहता, ''औरत जात होकर मर्दों के साथ मीटिंग में घूमते लाज नहीं लगती? सीता फटाक से जवाब देती, ''तू आपन जोरू के देख, हमरा के तू गार्जियन न है? बड़ा आया बोले वाला। सरवा भाषण में कुछ बोलत है, पीछे में कुछ। पुलिस से लड़ना हो तो कहता है हम औरत जात हैं। जा साले, हम तो घूमे करन। तोर के लाज लगै है तो डूब मर पानी आ।''

'मैं अपराधी हूँ' उपन्यास की पात्र आसमां की छोटी बेटी फरीदा किसी वोहरे लडके से प्रेम करती थी तथा उससे शादी करना चाहती थी। परन्तु उसके पिता यूसुफ खान को जैसे ही इस बात का पता चला तो वे अपनी बेटी के घर से बाहर निकलने पर पाबंदी लगा उसे कमरे में बंद कर देते हैं। यूसुफ खान जो स्वयं एक वोहरन को अपनी रखैल बनाए रखे थे, बेटी के वोहरे लड़के से प्रेम को सुनकर भड़क उठते हैं परन्तु उनकी पत्नी आसमां बेटी के पक्ष में बोलते हुए पति का विरोध करती है – ''तुम अंदसौर वाले खेत के मकान में वर्षों से उस वोहरन को रखे हो, तो शिया–सुन्नी वाली बात तुम्हारे दिमाग में नही कौंधी?''

'आँख मिचौली' उपन्यास की पात्र रेणु अपना जीवन अपने ढंग से जीना चाहती है, वह सोचती है कि माता–पिता या परिवार को उसके मार्ग में अवरोधक नहीं बनना चाहिए। प्रेम और विवाह में उसकी दृष्टि में बहुत अन्तर हैं। पति और सन्तान उसकी पूर्णता है परन्तु सम्पूर्णता नहीं। सभी प्रेम करने वाले व्यक्तियों से विवाह तो नहीं रचाया जा सकता। परिवार की चाहर दीवारी के बाहर अनन्त और विशाल कर्मक्षेत्र है, यहां प्रवेश उसके लिए वर्जित क्यों? यह केवल पुरूष का अधिकार नहीं है। नारी भी इस कर्म क्षेत्र में उतर सकती है उतरी है और अपनी अद्भुत क्षमता का परिचय देती रही है। घर उसे एक सीमा देता है परन्तु वह बाहर के असीम अनुभवों के साथ जीवन जीना चाहती है। अशिक्षा, अन्धकार और पराधीनता को रेणु समाज से दूर कर देना चाहती है। नारी भी एक इन्सान बनकर जिये, इसके लिए यदि व्यवस्था से संघर्ष करना पड़े तो वह कृतसंकल्प हैं। रेणु सोचती है– ''स्त्रियों को कमतर समझने वाले उन्हे अपनी सम्पत्ति समझने वाले इन स्वामियों की छाती पर सिल बनकर बैठ जायेगी और उन्हें नजर नीची कर लेने पर विवश कर देगी।'' वह अशिक्षा, अन्धकार और पराधीनता में जकड़ी हुई नारी को मुक्त करना चाहती है और विषमता से संघर्ष के लिए कृतसंकल्प होती है। वह अपनी वर्गीय हैसियत से बाहर आकर एक व्यक्ति के तौर पर पहचान पाना चाहती हैं रेणु के पिता जब उसकी इच्छा के विरूद्ध उसका विवाह करना चाहते हैं, तो वह उन्हे पत्र के माध्यम से कहती है – ''शिक्षित नारी का स्थान पुरूष के समकक्ष हो सकता है। उसके अधिकार भी उससे कम नही हैं। नारी हर क्षेत्र में आगे रही है, इतिहास साक्षी है कि जब भी उसे मौका मिला है तो उसने अपनी प्रतिभा का पूरा परिचय दिया है, ज्ञान–संग्रह के लिए जिस

सुविधा और समय की आवश्यकता होती है, वह उसे उपलब्ध नहीं कराया जाता। .....नारी हमेशा से ही हर क्षेत्र में आगे आयी है, अब भी आयेगी। अब उसे पीछे धकेलना संभव नहीं होगा।''

महिला लेखन स्त्री को देह बनाये रखने की साजिश को नकार रहा है। जिस स्त्री को अब तक विषय माना जाता था, जो एक वस्तु मात्र थी, वह अब बराबरी के स्तर की न केवल मांग कर रही है वरन् बराबरी के स्तर पर बैठने भी लगी है। एक व्यापक बदलाव महिला उपन्यासकारों की दृष्टि में दिखाई देने लगा है। अब यहां स्त्रियों की समस्याओं से सम्बन्धित विवाह आदि लेखन मूल प्रवृत्ति नहीं रह गयी है बल्कि इन समस्याओं की जड़ पर प्रहार कर शाश्वत समाधान खोजना आज के लेखन की मुख्य चिंता है। इसे ही अस्तित्व की खोज कह सकते हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

आर्थिक सशक्तता ने स्त्रियों के पाँव तले की जमीन को तो मजबूत किया ही है साथ ही उसे निर्णय क्षमता भी प्रदान की है। उसके इस शक्ति रूप का तेज पति, परिवार के बर्दाश्त के बाहर है। वह यदि निम्न वर्ग से है तो घरेलू नौकरानी बन सकती है। सिलाई–कढाई जैसे कार्य में पारंगत हो सकती है। मध्य वर्ग से है तो स्कूल, कॉलेज, दफ्तर, डॉक्टर, वकील की स्थिति उसके आत्मविश्वास को जाग्रत कर रही है। उच्चवर्गीय है तो बिजनेस कर देश–विदेश में घूम रही है। नित्य नये लोगों से मिलना उसके जीवनगत कैनवास को बड़ा करता है। उसके स्वाभिमान को चुनौती देना मुश्किल है। घर और बाहर की दोहरी भूमिका निभाते हुए उसने घर को बेघर होने से बचाया है। आधुनिकता की ओर बढते उसके कदम पुरूष को बहुत पीछे छोड़ते जा रहे हैं। समय बदल रहा है परन्तु पुरूष नही बदला है। उसने कामकाजी औरत की सीमा, सामर्थ्य और समस्याओं की तरफ से आंखे बंद कर रखी हैं। आज का महिला लेखन उनकी इस कर्मठता, बदली हुई सोच, समाज में सम्मान की आकांक्षा एवं संघर्ष के साथ स्वयं की स्वतंत्र पहचान स्थापित करने की ओर अग्रसर है।

निष्कर्ष

आधुनिक स्त्री अपने स्वतंत्र अस्तित्व के लिए पारिवारिक अस्तित्व को भी दांव पर लगाने में पीछे नहीं है। महिला उपन्यासकारों ने नारी की दीनता का रोना प्रायः बन्द कर दिया है। समस्याओं को सुलझाने की बजाय उन्हें बाइपास करते जाने की कामचलाऊ सोच से वह परिचित है, अतः उसका स्थान जीवन संघर्षों ने ले लिया है। बदला लेने और प्रेम में तो वह पुरूष से कहीं आगे निकल गई है, अब यदि विवाह हादसा बन जाए तो उसे पुराने कोट की तरह उतार कर फेंका जा सकता हैं। जीवन की ट्रेजडी को भी उसने ट्रेजी कामिक रूप में लेना सीख लिया है।

हिन्दी कथा साहित्य में अनेक महिला लेखिकाएं पूरी ताकत के साथ अपनी पीड़ा व्यथा दुःख को व्यक्त कर रही है। अपनी स्वानुभूति को सशक्तता से अभिव्यक्ति प्रदान कर रही हैं। महिला लेखिकाएँ अपनी स्वतंत्र पहचान बनाना चाहती हैं। हम भी मनुष्य हैं, हमें भी बराबरी का, समानता का अधिकार है। अब स्त्री पुरूष के सामने हाथ नहीं फैलायेगी। अब उसमें चेतना जागृत हुई है, वह स्वावलंबी बनी है। नारी अपनी अस्मिता को स्थापित करना चाहती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *नष्ट लड़की, नष्ट गद्य–तसलीमा नसरीन, अनुवाद–मुनमुन सेन पृ0सं0–10*
2. *बाधाओं के बावजूद नई औरतः उषा महाजन पृ0सं0–90*
3. *स्त्री, परम्परा और आधुनिकता, सं0 राजकिशोर, पृ0सं0–.44*
4. *छिन्नमस्ता : प्रभा खेतान, पृ0सं0.–216*
5. *एक जमीन अपनी : चित्रा मुद्गल, पृ0सं0–16*
6. *सीता : रमणिका गुप्ता पृ0सं0–66*
7. *मैं अपराधी हूँ : कृष्णा अग्निहोत्री, पृ0सं0–344*
8. *आंख मिचौली : दिनेशनन्दिनी डालमिया, पृ0सं0–34*